शान्ति मन्दिर द्वारा प्रकाशित यह ई-पत्रिका आप सबको समर्पित है ।

सिद्ध मार्ग

© Shanti Mandir जनवरी २०१९, संस्करण २८

प्रिय आत्मन् ! सप्रेम जय गुरुदेव ! सिद्धमार्ग पत्रिका का अट्ठाईसवाँ अंक प्रस्तुत है। इस अंक में महामण्डलेश्वर स्वामी नित्यानन्द जी द्वारा कुछ समय पूर्व शान्ति मन्दिर, मगोद में दिय गए प्रवचन के सम्पादित अंश प्रस्तुत हैं।

नूतनवर्षाभिनन्दनम्

श्री गुरुदेव

बाबा जी कहा करते थे कि कुछ न करो, आलसी बनो इससे अच्छा है कि व्यस्त रहो जिससे जो अवसाद (चिन्ता) है उसके लिए तुम्हारे पास समय नहीं होगा अर्थात तुम अपने काम में इतने तल्लीन हो जाओ कि किसी दूसरी चीज में तुम्हारा मन ही न जाए। इसके लिए सबसे पहले तो हमें मानसिक रूप से तैयार रहना पड़ेगा क्योंकि हमारा मन इतना प्रबल है कि वह अपने विचारों में मनुष्य को बाँध लेता है और फिर हम भी वैसा ही करने लगते हैं जैसा मन चाहता है। इसलिए मन को नियन्त्रित करना सबसे उत्तम कार्य है। गीता में भी भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है - "चञ्चलं हि मनः कृष्ण" अर्थात मनुष्य के शरीर में स्थित सभी इन्द्रियों में मन सबसे तेज है, उसको जीत पाना या उस पर नियन्त्रण करना कठिन है। क्योंकि वो

गीता में भी भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है -"चञ्चलं हि मनः कृष्ण" अर्थात मनुष्य के शरीर में स्थित सभी इन्द्रियों में मन सबसे तेज है, उसको जीत पाना या उस पर नियन्त्रण करना कठिन है।

बुरा कर्म होता है तो दिखता है और उसे सुधारा भी जा सकता है। लेकिन जब लोग सत्य का अवलम्बन लेकर बुरा करते हैं तो कैसे पता चले और उसको कैसे सुधारा जा सके, यह विचारणीय विषय है।

तुम्हारी आदत जानता है और तुम्हें उसी प्रकार के प्रलोभन से लेपित विचार देगा, फिर तुम उसमें घिरते चले जाओगे और उसके अनुसार ही कर्म करते रहोगे। अक्सर कलयुग में ये देखा जाता है कि जब हम कुछ अच्छा करना चाहते हैं तो लोग हमारा साथ या सहायता करने के बजाय हमारी हँसी उड़ाते हैं, चाहे वो खुद कितने ही गलत क्यों न हों। बुरा कर्म होता है तो दिखता है और उसे सुधारा भी जा सकता है। लेकिन जब लोग सत्य का अवलम्बन लेकर बुरा करते हैं तो कैसे पता चले और उसको कैसे सुधारा जा सके, यह विचारणीय विषय है। आध्यात्मिक क्षेत्र में अगर चिन्तन किया जाए तो बहुत से लोग आध्यत्मिक हैं, धार्मिक हैं, परन्तु वो एक आडम्बर है जिसको वेदान्त में अध्यारोप कहा गया है अर्थात अन्तःकरण में कुछ और है और बाहर कुछ और हैं। ऐसे लोगों की गति नहीं होती, वो आडम्बर में ही फँसे रहते हैं क्योंकि उनको उस आडम्बर में वास्तविकता नजर आने लगती है और उसी का उन्हें अहंकार होता है। इसी अहंकार के रहते वो उससे ऊपर नहीं उठ पाते। फिर उसमें हम चाहते कुछ और हैं अपने लिए लेकिन होता कुछ और है। फिर हम ये सोचते हैं कि मैं इतना कुछ करता हूँ लेकिन मेरे साथ गलत ही होता है और ऐसा सोचते-सोचते हम सबकुछ छोड़ बैठते हैं और यही होता है आडम्बर करने से। बाबाजी मुल्ला नसरुद्दीन की एक बात सुनाते थे कि एक बार नसरुद्दीन से प्रश्न पूछा गया कि सूर्य और चन्द्रमा में कौन सबसे ज्यादा जरूरी है तो प्रश्न का उत्तर देते हुए नसरुद्दीन कहता है कि चन्द्रमा ज्यादा जरूरी है क्योंकि चन्द्रमा रात में प्रकाश देता है जबकि दिन में सूर्य जिसकी कोई जरूरत ही नहीं होती क्योंकि दिन में प्रकाश देने का क्या फायदा बल्कि रात में उजाले की ज्यादा जरूरत होती इसलिए चन्द्रमा ज्यादा जरूरी है। इस बात पर प्रश्न पूछने वाला हँसा और वहाँ से चलता बना। ऐसा ही ठीक हमारे जीवन में होता है कि हम बात को समझ नहीं पाते हैं, उसकी गहराई को जाने वगैर ही हम बात का जबाव दे देते हैं और जब बाद में वो बात समझ में आती है

जीवन में पुरुषार्थ ही एक चीज है जो रंक को राजा बना सकता है, कठोर तपोबल के परिश्रम से योगी बना सकता है।

तब तक बहुत देर हो चुकी होती है। अवसर हमारे हाथ से निकल जाता है , अर्थात समय रहते कार्य नहीं करोगे तो फिर कार्य छूट जाएगा और ये समय कभी वापस नहीं आएगा। कबीरदासजी भी कहते हैं – "कल करे सो आज कर" ये वही सन्देश है जिसको मैंने समझाया कि अगर हम समय की कीमत नहीं जानेंगे तो समय हमारी कीमत नहीं जानेगा। जीवन में पुरुषार्थ ही एक चीज है जो रंक को राजा बना सकता है, कठोर तपोबल के परिश्रम से योगी बना सकता है। इस संसार में अपने लिए जो भी करना है वो हमें स्वयं करना पड़ेगा, कोई और करने नहीं आएगा। हमें अपने बल से स्वयं साबित करने का अवसर देखना है और कड़ी मेहनत के बल पर स्वयं को सिद्ध करके दिखा देना है यही जिन्दगी है। रुको मत, चलते रहो, किसी न किसी सत्कर्म में लीन रहो। जितना आपसे हो सकता है उतना सहयोग प्रदान करो। स्वयं को श्रेष्ठ बनाने में जुटे रहो। जीवन में कई तरह के लोग मिलेंगे और कई तरह के विचार आपको देकर जाएँगे जिनमें कुछ सही, कुछ गलत होंगे लेकिन हमको दृढ़ विश्वास रखना है अपने गुरु में, अपने ईष्ट में और जो कुछ भी हो रहा है अच्छा हो रहा है और आगे जो भी होगा वो भी अच्छा होगा ऐसी अपने हृदय में श्रद्धा बनाकर रखनी है और ये श्रद्धा और विश्वास तब ही हमारे अन्तःकरण में होगा जब हम अध्यात्म पर चिन्तन और अपनी चेतना के बारे में जिज्ञासु होंगे। उससे हमारे हृदय में सद्गुरु के प्रति श्रद्धा बढ़ेगी और हम आडम्बर से थोड़ा ऊपर उठ जाएंगे। चेतना और चिंतन जीवों के अस्तित्व के होने और उस अस्तित्व को स्वयं समझने का नाम है। "मैं" और "आप" या ब्रह्माण्ड के समस्त "जीव" जिनकी उत्पति हुई है और जो "चर" हैं वे सब एक चेतना के कारण ही अस्तित्व में हैं और यह चेतना हमें मिली है उस परमात्मा से जिसकी

प्रकृति चेतन भी है और शून्य भी, जो स्वयं अपनी प्रकृति का रचयिता और विध्वंशकर्ता भी है। चेतना जीवों की वो शक्ति है जिससे जीव अस्तित्व में है, जिससे वह बोल, समझ, सुन और कोई कार्य कर सकता है। "मैं जीव हूँ, मैं चर हूँ, मैं भावनायुक्त हूँ, मैं "मैं" हूँ, मैं कुछ हूँ, मैं संसार को समझने वाला हूँ, मैं द्रव्यों को जानने वाला हूँ, मैं जीव होकर दूसरे सजीव और निर्जीवो में भेद को जान के उनसे भावनायुक्त बंधन बनानेवाला हूँ, मैं कर्ता हूँ, ये सब समझना और मानना चेतना के कारण ही सम्भव है। चिंतन जीवों को प्राप्त चेतना के कारण ही संभव है। सबसे बड़ी बात ये है कि सोचते तो बहुत से चर जीव हैं परन्तु बुद्धिबल द्वारा सही मार्ग में सोचना अर्थात् जिसे हम विवेक द्वारा सोचना कहते हैं वही चिंतन होता है। चिंतन अध्यात्म और भौतिक जगत दोनों का हिस्सा हैं। दोनों जगत में प्रगति करने के लिए चिंतन आवश्यक है। आध्यात्मिक चेतना और चिंतन समझना इसलिए जरूरी है क्योंकि इस भौतिकवाद में जन्मे सभी चेतन जीवो को चिंतन करना हो तो सिर्फ भौतिक द्रव्यों और संसाधनों एवं कुछ कदम तक दिखाई देने वाला भविष्य के बारे में ही चिंतन करते है। यह चेतन आत्मा इस शरीर में है परन्तु वो भौतिकवाद में खो गई है। अध्यात्म की ओर किये जाने वाला चिंतन जो की सत्य और धर्म मार्ग है। अल्पकालीन सुख जो जल्द ही समाप्त हो जाता है और मनुष्य को फिर वही निराशा, फिर वही शोक, घेर लेता है। मनुष्यचेतना हमें इस लिए ही मिली है ताकि हम सुख और दुःख की आने वाली निरंतर लहरों से छूट सकें और उसके लिए सहायक है मात्र अध्यात्म चेतना। गोस्वामी तुलसीदास जी कहते है: "बड़े भाग्य मानुस तन पावा, सुर दुर्लभ सद्ग्रन्थन गावा"

अर्थात् मनुष्य को छोड़कर कोई और जीव चिंतन

मनुष्यचेतना हमें इस लिए ही मिली है ताकि हम सुख और दुःख की आने वाली निरंतर लहरों से छूट सकें और उसके लिए सहायक है मात्र अध्यात्म चेतना।

क्यों न हम अपने चिंतन को अध्यात्म की तरफ मोड़कर सुख और दुःख की निरंतर आने वाली लहरों से निकल जाएँ और आध्यात्मिक चिंतन कर उस परमात्मा तक पहुंचने का प्रयत्न करें जहाँ परमानंद है।

नहीं कर पाते, परमात्मा ने उन्हें ये गुण नहीं दिया है तो फिर क्यों न हम अपने चिंतन को अध्यात्म की तरफ मोड़कर सुख और दुःख की निरंतर आने वाली लहरों से निकल जाएँ और आध्यात्मिक चिंतन कर उस परमात्मा तक पहुंचने का प्रयत्न करें जहाँ परमानंद है।

एक बार भगवान् श्रीकृष्ण से अर्जुन ने पूछा कि मनुष्य स्वयं न चाहता हुआ भी बलात् लगाये हुए की भाँति किससे प्रेरित होकर पाप का आचरण करता है ? तो भगवान् गीता में कहते हैं कि-

काम एष क्रोध एष रजोगुण समुद्भवः।
महाशनो महापाप्मा विद्धयेनमिह वैरिणम् ॥

अर्थात रजोगुण से उत्पन्न हुआ यह काम ही क्रोध है। यह बहुत खाने वाला अर्थात् भोगों से कभी न अघाने वाला और बड़ा पापी है। इसको ही तू इस विषय में वैरी जान। कलयुग में काम और क्रोध ही हैं जो समाज में परस्पर झगड़े और फूट डालते हैं अर्थात् हम इतने ज्यादा अपनी इन्द्रियों के वश में हो जाते हैं कि हम अपना विवेक खो बैठते हैं और फिर हमें जो भी समझ में आता है चाहे वो गलत हो हम बस करना चाहते हैं क्योंकि हम क्रोध की अग्नि में जल रहे होते हैं। हम कामान्धता में फँसे होते हैं, वहाँ कोई हमारा मार्गदर्शन भी करना चाहे तो हम उसको भी अपना अहित सोचने वाला समझकर, उससे दूर हो जाते हैं। यही कारण है कि हमारा उत्थान नहीं हो पाता और हम जैसे आये थे वैसे ही इस संसार से विदा हो जाते हैं और हमने इस संसार और भौतिकवाद में रहकर जितने भी पाप किए उसका परिणाम हमारी सन्तानें भोगती हैं। उसके दुष्परिणाम हमारी आने वाली पीढी की दरिद्रता और गरीबी का कारण बन जाते हैं, फिर हम सोचते हैं कि हे भगवान् ! मैंने ऐसे कौन से कर्म किए जिससे मुझे ये दिन देखने को मिला है अर्थात्

आत्मा, परमात्मा, जीव, माया, जन्म-मृत्यु, पुनर्जन्म, सृजन-प्रलय की अबूझ पहेलियों को सुलझाने का प्रयत्न है अध्यात्म।

ये सब मुझे प्राप्त हुआ है। जो विवेकवान्, अच्छे विचारवाला, जिसका पुण्य बचा है, वह जब इन सब बातों से, विचारों से उठ नहीं पाता है तो वह परमतत्त्व की खोज में चल देता है और अगर सच में विचारवान है और जिज्ञासु है तो जल्द ही उसे कोई ऐसा मिल जाता है जिससे उसको मार्गदर्शन प्राप्त हो सके। वास्तविकता यह है कि परमतत्त्व को पाना हर किसी के वश की बात नहीं हैं क्योंकि परमात्मा जिसे चाहता है उसे ही मिलता है जैसा गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं कि- "मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये, यततामपि सिद्धानां कश्चिद् मां वेत्ति तत्त्वतः" अर्थात् हजारों मनुष्यों में कुछ ही होते हैं जो कि मुझे प्राप्त करना चाहते हैं और प्राप्त करने हेतु कठोर परिश्रम करते हैं और कठोर परिश्रम करने वालों में भी कोई एक ही होता है जो मुझे प्राप्त कर पाता है अन्यथा कोई नहीं। आगे भगवान् कहते हैं कि "रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन, आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति" अर्थात् अपने अधीन किए हुए अन्तःकरण करने वाला साधक अपने वश में की हुई राग-द्वेष से रहित इन्द्रियों द्वारा विषयों में विचरण करता हुआ अन्तःकरण की प्रसन्नता को प्राप्त करता है। अध्यात्म एक दर्शन है, चिंतन-धारा है, विद्या है, हमारी संस्कृति की परंपरागत विरासत है, ऋषियों-मनीषियों के चिंतन का निचोड़ है, उपनिषदों का दिव्य प्रसाद है। आत्मा, परमात्मा, जीव, माया, जन्म-मृत्यु, पुनर्जन्म, सृजन-प्रलय की अबूझ पहेलियों को सुलझाने का प्रयत्न है अध्यात्म। अज्ञात परतत्व की खोज, परमात्मा की खोज, परमात्मा के अस्तित्व, उसके स्वरूप, गुण, स्वभाव, कार्यपद्धति, जीवात्मा की कल्पना, परमात्मा से उसका संबंध, इस भौतिक संसार की रचना में उसकी भूमिका, जन्म से पूर्व और उसके पश्चात की स्थिति के बारे में जिज्ञासा,

जीवन-मरण चक्र और पुनर्जन्म की अवधारणा इत्यादि प्रश्नों पर चिंतन और चर्चाएं की गईं और उनके आधार पर अपनी-अपनी स्थापनाएं दी गईं। इन्हीं के आधार पर पुराणों और अन्य शास्त्रों में व्याख्याएं, कथाएं, सूत्र, सिद्धांत लिखे गए हैं।

सभी पुराणों में या उपनिषदों में यही कहा गया है कि "अयमात्मा ब्रह्म" "सोऽहम्" "तत्त्वमसि" अर्थात तुम उस परमब्रह्म परमेश्वर के अंग हो, तुम देवांश हो, तुम्हारे अन्दर वो सब कुछ है जो उनके पास है, बस सुषुप्त अवस्था में है, तुम्हें उसको जगाना है, अपनी सघन साधना से और तपस्या से, ध्यान से। परमात्मा ने इन सबके लिए तुम्हें अपना एक माध्यम दिया है और वह है सद्गुरु, एक मात्र साधन जिसकी कृपा से, आज्ञा से, तुम परमतत्त्व की प्राप्ति कर सकते हो। अधिकांश लोग सोचते हैं कि अध्यात्म में अगर चलना है तो साधु बनना पड़ेगा या सन्यास लेना पड़ेगा, तो मैं उनसे कहना चाहूँगा कि ऐसा बिल्कुल नहीं है, क्योंकि हमने देखा है बाबाजी के पास बहुत बड़े-बड़े लोग आया करते थे और वो सब ग्रहस्थ थे और पूरे विश्व में भ्रमण किया करते थे लेकिन फिर भी बाबा जी के प्रति श्रद्धा और विश्वास किसी शिष्य से कम नहीं था। सप्ताह में एक बार आते थे और उस दिन सारा दिन वहीं बिताते थे, वहाँ की दिनचर्या में, सत्संग में, भजन-कीर्तन में ध्यान में, सम्पूर्ण आनन्द का अनुभव करते थे। अध्यात्म में अपनी निष्ठा बनाये रखते और बाबाजी की सेवा में निरन्तर रहा करते तो क्या वो सन्यासी थे ? नहीं। इसलिए मैं कहता हूँ कि अगर तुम्हारे हृदय में श्रद्धा और विश्वास है, तुम जिज्ञासु हो, तुम्हारे अन्तःकरण में भक्ति का उद्भाव स्फुटित है तो इससे कुछ भी फर्क नहीं पड़ता कि तुम कौन हो या क्या कर रहे हो ? तुम भगवान के प्रति आकर्षित होकर रहोगे क्योंकि वो स्फुरण तुम्हें भगवान के प्रति श्रद्धा को दृढ़ करेगा और तुम उन्हीं के हो जाओगे। श्रीमद्भागवत में श्री कृष्णजी ने प्रेम का प्रसार किया है। उन्होंने बताया है कि प्रेम से सारे जगत को अपना बनाया जा सकता है। गाँव

परमात्मा ने इन सबके लिए तुम्हें अपना एक माध्यम दिया है और वह है सद्गुरु, एक मात्र साधन जिसकी कृपा से, आज्ञा से, तुम परमतत्त्व की प्राप्ति कर सकते हो।

की गोपियाँ जिनका विवाह पूर्व ही हो चुका है , लेकिन भगवान के श्रीचरणों में उनका प्रेम अपार समुद्र की तरह है। गोपाल की वंशी की धुन सुनते ही अपनी सुध-बुध खो बैठना और भगवान के प्रति आकर्षित होना ये सब हमें सिखाता है कि श्रद्धा और विश्वास के साथ-साथ भगवान के श्रीचरणों में प्रेम होना भी जरूरी है । उनकी मनमोहक छवि को अपने अन्तःकरण में स्थापित करना जरूरी है । तब कहीं जाकर हम भी उन गोपियों की तरह प्रभु के प्रति अपनी भक्ति प्रकट कर सकेंगे और अपने जीवन का कल्याण कर सकेंगे। अध्यात्म में अपनी साधना को प्रबल करने के लिए सबसे जरूरी है, जो हमारे बड़े बाबाजी कहा करते थे – "शुद्ध भावना, निर्मल मन"।

अध्यात्म में अपनी साधना को प्रबल करने के लिए सबसे जरूरी है जो हमारे बड़े बाबाजी कहा करते थे – "शुद्ध भावना, निर्मल मन"।

॥ सद्गुरुनाथ महाराज की जय ॥